**ओ३म्**

**‘संसार में सबसे बड़ा परिवार ईश्वर का परिवार है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 हम परिवार शब्द का प्रयोग बहुधा करते हैं। पहले भारत में संयुक्त परिवार होते थे। एक परिवार में कई भाई, उनके परिवार अर्थात् पत्नी व बच्चे, बहनें आदि होते थे। इन सबसे मिलकर एक संयुक्त परिवार बनता था। देश आजाद हुआ, लोग पढ़े लिखे और नौकरी आदि व्यवसाय करने लगें। कुछ की आर्थिक स्थिति अच्छी हुई तो उन्हें संयुक्त परिवार में कमियां दृष्टिगोचर होने लगी। पाश्चात्य मूल्यों में विद्यमान स्वच्छन्दता आदि अपमूल्यों ने भी संयुक्त परिवार की व्यवस्था को हानि पहुंचाई। कई कारणों से यह संयुक्त परिवार विघटित होते गये और अब प्रायः एकल परिवार ही अधिकांशतः देखने को मिलते हैं। वर्तमान में एक परिवार में पति-पत्नी के अतिरिक्त उनके बच्चे ही होते हैं। यदि पुत्र व पुत्रवधु के संस्कार अच्छे हैं तो माता-पिता भी उनके साथ रह सकते हैं। जिन परिवारों में वृद्ध माता-पिताओं को रखा जाता है वहां कम व अधिक माता-पिता को बोझ ही माना जाता है। आजकल एक परिवार में एक, दो व अधिक हुआ तो तीन सन्तानें होती हैं। अतः परिवार की संख्या अधिकतम पांच होती है और यदि किसी परिवार में माता-पिता भी हैं, तो उनकी संख्या सात तक हो सकती है। औसत संख्या पर विचार करें तो सम्भवतः यह तीन या चार के बीच हो सकती है।

दूसरी ओर हम देखते हैं कि इस संसार को एक सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सच्चिदानन्द सत्ता ने जड़, कारण व मूल प्रकृति, जो सत, रज व तम गुणों वाली त्रिगुणात्मक प्रकृति कही जाती है, से बनाया है। इस ब्रह्माण्ड में अनन्त संख्या में एकदेशी, सूक्ष्म, अल्पज्ञ, ससीम, अनादि, अमर, नित्य चेतन जीवात्मायें हैं जिन्हें ईश्वर उनके पूर्व जन्मों के संस्कारों व उनके कर्मानुसार अभुक्त कर्मों के फलों का भोग करने के लिए जन्म देता है। वस्तुतः यह सृष्टि ईश्वर ने असंख्य जीवात्माओं को उनके कर्मानुसार सुख व दुःख प्रदान करने के लिए ही बनाई है। जीवात्माओं के शरीर भी परमात्मा ही अपनी न्याय व्यवस्था से निश्चित कर बनाता वा प्रदान करता है। इस सृष्टि का व नाना प्राणि योनियों में जन्म का उद्देश्य जीवात्माओं को सुख प्रदान करना होता है। जो जीवात्मायें असत्, अज्ञान, अशुभ कर्म नहीं करती हैं, उन्हें किसी प्रकार का दुःख नहीं होता है। ब्रह्माण्ड की अनन्त जीवात्मायें ईश्वर की प्रजा अर्थात् सन्तानें हैं और इन सभी जीवात्माओं से मिलकर ही ईश्वर का परिवार बना हैं जिनका पालन व पोषण ईश्वर अपने बनायें नियमों व व्यवस्थाओं के अनुसार करता है। विचार करने पर ज्ञात होता है कि सभी जीवात्मायें वा प्राणी अपनी अपनी योनियों में सन्तुष्ट रहते हैं। मरना अपवादस्वरूप शायद ही कोई चाहता हो परन्तु जीवित रहना सभी चाहते है। मनुष्यादि सभी प्राणियों के जीवन में दुःख की बहुत कम स्थितियां आती हैं और वह सभी प्रायः मनुष्यों द्वारा ही अविद्या व अविवेक के कारण निर्मित होती हैं। यदि मनुष्य वेद ज्ञान को प्राप्त कर उसके अनुसार जीवन यापन करें तो अनुमान हैं कि मनुष्य को कम से कम दुःख होंगे और उसका जीवन सुख व चैन से व्यतीत होगा। यह भी उल्लेख कर दें कि भौतिक साधन व सुख-सुविधायें सुख के कारण हो सकते हैं परन्तु इनसे स्थिर वा स्थाई सुख नहीं मिलता। सच्चा सुख तो सत्य ज्ञान वेद व उसके आचरण अर्थात् धर्म का पालन करने से मिलता है।

ईश्वर का परिवार ब्रह्माण्ड में मनुष्यों के परिवारों में सबसे बड़ा परिवार है। मनुष्यों का कोई परिवार आकार व परिमाण में ईश्वर के परिवार की बराबरी नहीं कर सकता। वस्तु स्थिति यह है कि मनुष्यों के सभी परिवार भी ईश्वर के परिवार में ही सम्मिलित हैं। ईश्वर के सभी प्राणियों पर असंख्य व अनन्त उपकार हैं जिससे मनुष्य कभी उऋण नहीं हो सकते। सामान्यतः ईश्वर को अपने लिए इस सृष्टि की कोई आवश्यकता नहीं थी। वह तो आनन्द स्वरूप होने से प्रत्येक स्थिति में सुखी व आनन्दित रहता है। यह सृष्टि ईश्वर ने अपनी प्रजा जीवात्माओं के लिए बनाई है। वह हमारा माता, पिता, गुरु व आचार्य भी है और असली राजा व न्यायाधीश भी वही है। वह परमात्मा ही सूर्य का समय पर उदय व उसको अस्त करता करता है, ऋतु परिवर्तन करता है और कृषि द्वारा हमें नाना प्रकार के अन्न, फल-फूल, वनस्पतियों एवं गो आदि पशुओं से दुग्ध एवं दुग्ध से निर्मित होने वाले पदार्थों को प्रदान कराता है। ज्ञान मनुष्य की मौलिक आवश्यकता है। आचरण व कर्तव्य-कर्मों का ज्ञान भी मनुष्यों को आदि काल में उसी से ऋषियों की आत्माओं में उपदेश द्वारा प्राप्त हुआ है। ईश्वरीय ज्ञान वेद की प्राप्ति व उपलब्धि एवं उसका आचरण ही सर्वोत्तम सुख, इहलौकिक व पारलौकिक अर्थात् मोक्ष का सुख, प्राप्ति का साधन है जिसे ईश्वर ने हमें प्रदान किया हुआ है। हम ईश्वर की व्यवस्था से एक शिशु के रूप में संसार में आते हैं, बढ़ते हैं, बालक व किशोर, उसके बाद युवा, प्रौढ़ और अन्त में वृद्ध हो जाते हैं। वृद्धावस्था में आकर हमारे शरीर की शक्तियों का ह्रास होता रहता है और किसी दिन अचानक या किसी रोग से, वस्त्र परिवर्तन की भांति, मृत्यु हो जाती है और फिर कर्मानुसार ईश्वर हमें फिर से नया जन्म प्रदान करता है।

यह तो हमने जान ही लिया है कि हम ईश्वर के परिवार के अंग है और ईश्वर का परिवार ही हमारा वास्तविक परिवार है जो मनुष्य व पशु परिवारों की तुलना में सबसे बड़ा है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह प्रत्येक दिन ईश्वर के प्रति अपने कर्तव्य पर विचार करे, स्वाध्याय करे, मित्रों व विद्वानों से चर्चा करें और आप्त पुरुषों का सत्संग करे। मनुष्यों की सहायता के लिए कर्तव्यों का विधान भी ईश्वर ने सृष्टि की आदि में प्रदत वेदों के ज्ञान द्वारा किया हुआ है। हमें केवल माता-पिता व आचार्यों से शिक्षा प्राप्त करनी है तथा गुरुओं व आचार्यों से संसार व इसके रहस्यों को जानना है। कृषि व वाणिज्य आदि कार्य करने हैं तथा इनसे इतर ईश्वर के प्रति हमें कृतज्ञ भाव रखते हुए उसकी वेद विधान **‘कस्मै देवाय हविषा विधेम और भूयिष्ठान्ते नमः उक्तिं विधेम’** आदि द्वारा स्तुति, प्रार्थना, उपासना, अग्निहोत्र यज्ञ द्वारा हवि प्रदान करने सहित उसकी भक्ति करनी है। हमारे द्वारा भक्ति आदि इन सब कार्यों को करने से भी ईश्वर को कोई लाभ नहीं होता अपितु इसका लाभ भी हमें ही होता है। स्तुति से ईश्वर में प्रीति होती है और हम दुगुर्णों को त्याग कर ईश्वर के गुणों के अनुसार स्वयं को बनाने का प्रयत्न करते है। प्रार्थना में हम ईश्वर से ईश्वर व अन्य आवश्यक पदार्थों व सुख आदि को मांगते हैं। उपासना में ईश्वर से स्वयं को जोड़ते वा युक्त करते हैं जिससे संगति के गुण हमारी आत्मा में प्रविष्ट होते हैं जिससे हमारा ज्ञान व सामर्थ्य में वृद्धि होती है। उपासना ही ईश्वर का साक्षात्कार भी होता है जो कि मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य है। हवन वा अग्निहोत्र करने से भी हमें शुद्ध प्राण वायु मिलती है जिससे हम स्वस्थ व निरोग रहते हैं और हमारा योग-क्षेम होता है। भक्ति से भी हमें परोपकार आदि की प्रेरणा मिलती है और हमारा मन सुख, शान्ति व प्रसन्नता से भर जाता है। अतः ईश्वर के प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट करना और प्रातः सायं वेद मन्त्रों से उसकी स्तुति, प्रार्थना, उपासना, सन्ध्या व उसे हवि प्रदान करना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है।

इस संक्षिप्त लेख मे हमने यह जाना कि ईश्वर का परिवार मनुष्य परिवारों में सबसे बड़ा है। सभी जीवात्मायें व प्राणी ईश्वर के परिवार के अंग व सदस्यों के समान है। ईश्वर हमारा माता, पिता, गुरु, आचार्य, राजा, न्यायाधीश और अग्रणीय नेता आदि है। इसके साथ ही हम इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

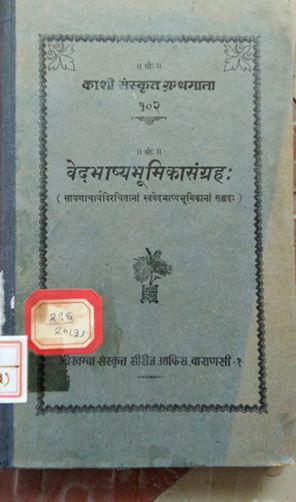
**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘महर्षि दयानन्द और आचार्य सायण के वेद भाष्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य।**

आर्य विद्वान श्री कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री जी ने एक लिखा है जिसका शीर्षक है ‘‘क्या आचार्य सायण वेदों के विशुद्ध भाष्यकार थे?’’ लेखक ने अपने लेख में स्वीकार किया है कि आचार्य सायण का भाष्य पूर्ण विशुद्ध भाष्य नहीं है। श्री वैदिक जी के लेख पर एक टिप्पणीकार के अनुसार ‘‘सायण महोदय के भाष्य पर प्रश्न चिन्ह लगाना उचित नहीं है।” इस संबंध में हमें यह कहना है कि महाभारत काल के बाद महर्षि दयानन्द वेद के मर्मज्ञ विद्वान हुए हैं। उन्होंने अपने समय के उपलब्ध सभी वैदिक साहित्य का मनोयोग से पारायण किया था। वह एक सिद्ध योगी भी थे और 18 घंटे तक की समाधि लगाने की सामर्थ्य उनको प्राप्त थी। उनका एकमात्र कार्य ईश्वरोपासना अथवा वेदों का प्रचार व प्रसार ही था। वह किसी राजा के सेनापति, मंत्री व ऐसे समय साध्य वाले कार्यों में व्यस्त नहीं थे। स्वामी दयानन्द जी ने पाणिनी व्याकरण, निरुक्त व निघण्टु आदि ग्रन्थों का भी गहन अध्ययन व मनन किया था। उनके गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती तो वैदिक आर्ष व्याकरण एवं ज्ञान के सूर्य थे। उन्होंने आचार्य सायण के भाष्य में अनेक विसंगतियां पाई थीं जिनका उन्होंने अपने साहित्य में यत्र तत्र वर्णन किया है।

स्वामी दयानन्द ने अपनी प्रतिभा व योग्यता के आधार पर प्राचीन ऋषि परम्परा के अनुसार वेदों के प्रचार प्रसार हेतु सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के प्रणयन सहित वेदों का अपूर्व भाष्य कर वेदों की रक्षा व प्रचार का अभूतपूर्व कार्य किया है। उनके कार्य को उनके अनेक शिष्यों ने जारी रखा और आज आर्य जाति का यह गौरव व सौभाग्य है कि उसके पास अनेक आर्य विद्वानों के वेदों के प्राचीन ऋषि परम्परा के पोषक वेद भाष्य सुलभ है। आज स्थिति यह है कि वेदों के भाष्यों का अध्ययन आर्य परिवारों में ही होता है। अपवाद स्वरूप ही कुछ सीमित पौराणिक व सनातनी परिवार वेदों व उनके भाष्यों का अवलोकन व अध्ययन करते होंगे। पौराणिकों के धार्मिक ग्रन्थों की प्रकाशिका संस्था गीता प्रेस गोरखपुर गीता, रामायण, रामचरित मानस, भागवत पुराण व अन्य पुराणों के प्रकाशन तक ही सीमित है। उसने सम्भवतः कभी वेदों के भाष्य का प्रकाशन नहीं किया। इसका कारण यही हो सकता है कि वह वेद से अधिक गीता, रामचरित मानस व पुराणों को महत्व देते हैं। उनके लिए वेदों का महत्व गौण हैं।

स्वामी दयानन्द जी के सायण वेद भाष्य पर विचारों को संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत कर रहे हैं। वह लिखते हैं “(स्वामी दयानन्दकृत वेदभाष्य) प्राचीन आचार्यों के भाष्यों के अनुकूल बनाया जाता है। परन्तु जो रावण, उवट, सायण और महीधर आदि ने भाष्य बनाये हैं, वे सब मूलमन्त्र और ऋषिकृत व्याख्यानों से विरुद्ध हैं। मैं वैसा भाष्य नहीं बनाता। क्योंकि उन्होंने वेदों की सत्यार्थता और अपूर्वता कुछ भी नहीं जानी। और जो यह मेरा (स्वामी दयानन्द जी का वेद) भाष्य बनता है, सो तो वेद, वेदांग, ऐतरेय, शतपथ ब्राहमणादि ग्रन्थों के अनुसार होता है। क्योंकि जो-जो वेदों के सनातन व्याख्यान हैं, उनके प्रमाणों से युक्त बनाया जाता है, यही इसमें अपूर्वता है। क्योंकि जो-जो प्रामाण्याप्रामाण्यविषय में वेदों से भिन्न शास्त्र (ऋषि दयानन्दकृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थ) में गिन आये हैं, वे सब वेदों के ही व्याख्यान हैं। वैसे ही ग्यारह सौ सत्ताईस (1127) वेदों की शाखा भी उनके व्याख्यान ही हैं। उन सब ग्रन्थों के प्रमाणयुक्त (उनके द्वारा) यह भाष्य बनाया जाता है। और दूसरा इसके अपूर्व होने का कारण यह भी है कि इसमें कोई बात अप्रमाण वा अपनी रीति से नहीं लिखी जाती। और जो-जो भाष्य उवट, सायण, महीधरादि ने बनाये हैं, वे सब मूलार्थ और सनातन वेदव्याख्यानों से विरुद्ध हैं। तथा जो-जो इन नवीन भाष्यों के अनुसार अंग्रेजी, जर्मनी, दक्षिणी और बंगाली आदि भाषाओं में वेदव्याख्यान बने हैं, वे भी अशुद्ध हैं। जैसे देखों--सायणाचार्य ने वेदों के श्रेष्ठ अर्थों को नही जान कर कहा है कि **‘सब वेद क्रियाकाण्ड का ही प्रतिपादन करते हैं।’** यह उनकी (आचार्य सायण की) बात मिथ्या है। इसके उत्तर में जैसा कुछ इसी (ऋग्वेदादिभाष्य) भूमिका के पूर्व प्रकरणों में संक्षेप से लिख चुके हैं, सो (पुस्तक में ही) देख लेना।” स्वामी दयानन्द जी ने सायणाचार्य जी द्वारा जिन मन्त्रों के मिथ्यार्थ किये हैं उनके अर्थ भी दिखायें हैं। विस्तार भय से उन्हें नहीं दे रहे हैं। इच्छुक पाठक पूरा प्रकरण ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में देख सकते हैं।

यह सुविदित तथ्य है कि आचार्य सायण विजयनगर राज्य के सेनापति व अमात्य थे। जितना साहित्य आचार्य सायण के नाम से मिलता है, उससे यह सहज अनुमान होता है कि उनके लेखन का अधिकांश कार्य उन्होंने स्वयं न करके अपने शिष्यों से कराया है। कोई भी लेखक उतना व वैसा ही कार्य कर पाता है जैसी व जितनी उसकी विद्या होती है। सायण आचार्य जी के काल में वेद विलुप्त हो चुके थे। उनसे पूर्व आचार्य शंकर भी आ चुके थे। उन्होंने गीता, उपनिषद व वेदान्त दर्शन पर ही भाष्य किया। वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं, यह तथ्य तब भी प्रचलित था परन्तु उन्होंने वेदों पर किन्हीं कारणों से भाष्य नहीं किया। अतः उनके बाद आचार्य सायण ने वेदभाष्य करके जहां एक प्रशंसनीय कार्य किया वहीं उनकी व उनके शिष्यों के विद्या व ज्ञान के कारण वह जैसा कर सके वैसा ही किया। स्वामी दयानन्द ने उन पर जो टिप्पणियां की हैं वह अधिकारिक टिप्पणियां है जो प्रमाणों से भी पुष्ट हैं। ऋषि दयानन्द जी के ऋग्वेदभाष्य में भी उनकी वेदभाष्य की न्यूनताओं को देखा जा सकता है। लेखनी को विराम देने से पूर्व हमारा यही निवेदन है कि सम्प्रति ऋषि दयानन्द और उनकी शिष्य परम्परा द्वारा किया गया वेदभाष्य ही वेदों का सत्यार्थ व यथार्थ वेदभाष्य है। उनका वही भाष्य पठन पाठन में प्रचलित भी है और प्रचारित हो रहा है। विदेशी विद्वान मैक्समूलर ने भी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका व उनके वेदभाष्य की प्रशंसा करके उनके भाष्य को पुष्ट व प्रमाणित किया है। उनके ही भाष्य को सभी को अपनाना चाहिये और ऋषि दयानन्द के सत्य मन्तव्यों को स्वीकार करना चाहिये। हमारा निजी मन्तव्य है कि यदि आज आचार्य सायण व पूर्ववर्ती अन्य विद्वान होते तो निष्पक्ष भाव से वह भी महर्षि दयानन्द जी के वेदभाष्य को ही अपनाते। इति ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**196 चुक्खूवाला-2**

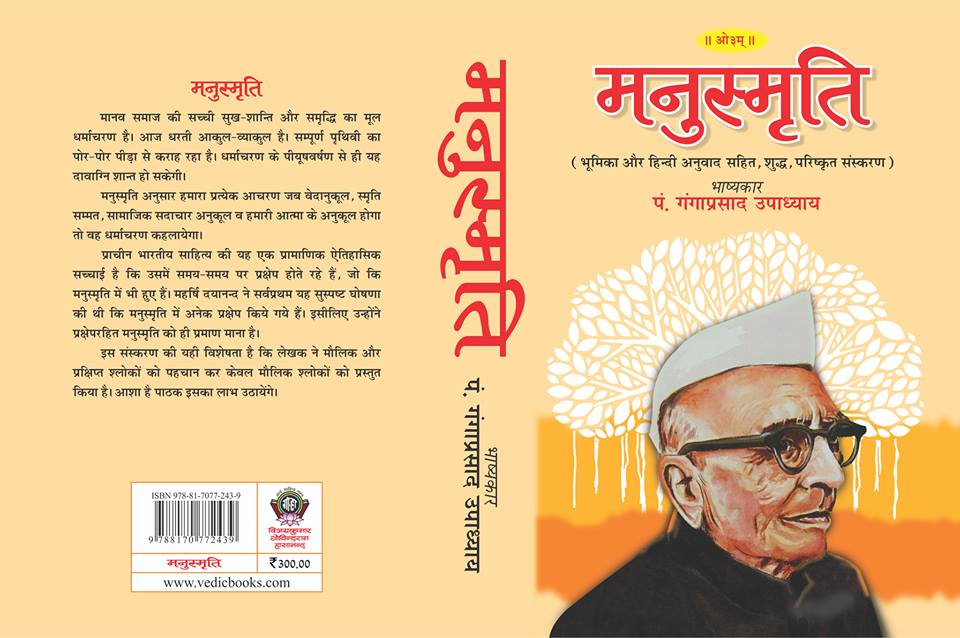
**देहरादून -248001**

**फोनः 09412985121**

**ओ३म्**

**‘मनुस्मृति पर बहुप्रतीक्षित पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी का भाष्य वा टीका प्रकाशित’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 प्राचीन वैदिक साहित्य में वेद, दर्शन व उपनिषदों की तरह ही **‘‘मनुस्मृति”** का भी महत्व निर्विवाद रूप से है। यह इस सृष्टि का प्रथम धर्मशास्त्र व मानव संविधान है। मनु जी की प्रतिमा जयपुर उच्च न्यायालय परिसर में विद्यमान है। हमने सुना है कि फ्रांस के उच्चतम न्यायालय अथवा संसद के बाहर भी महाराज मनु की प्रतिमा स्थापित है। हमें लगता है कि संसार के सभी देशों के विधान व संविधान अप्रत्यक्ष रूप से वेद और मनुस्मृति के आश्रय से ही बने हैं। मनु महाराज की इस मनुस्मृति में मध्यकाल में हमारे देश के विद्वानों ने प्रक्षेप कर इसका स्वरूप बिगाड़ दिया। महाराज मनु ने गुण, कर्म व स्वभावानुसार वर्णव्यवस्था का विधान किया था परन्तु प्रक्षेपकारों ने इसमें जन्मना वर्ण व्यवस्था को भी प्रविष्ट कर मानवजाति के साथ घोर अन्याय किया है।

आर्यसमाज मनुस्मृति के वेदानुकूल विधानों को ही स्वीकार करता है। वेद विरुद्ध जो भी विधान मनुस्मृति में पाये जाते हैं वह महाराज मनु के विधान न होकर प्रक्षेपकारों के प्रक्षेप हैं। इस समय आर्यसमाज में पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, पं. तुलसीराम स्वामी, पं. चन्द्रमणि विद्यालंकार पं. राजवीर शास्त्री व डा. सरेन्द्र कुमार की मनुस्मृतियों की चर्चा की जाती है। पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय आर्यसमाज के शीर्षस्थ विद्वानों में से थे। आपने हिन्दी, संस्कृति, अंग्रेजी एवं उूर्द भाषा में प्रभूत साहित्य रचा है। आपके शिष्य व भक्त आर्य विद्वान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने आपके अधिकांश ग्रन्थों को ‘गंगा ज्ञान सागर’ नाम से ग्रन्थमाला के रूप में चार खण्डों में प्रकाशित कराया है। आपने उपाध्याय जी की जीवनी भी लिखी है। आस्तिकवाद पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी की बहुचर्चित, प्रशंसित एवं पुरस्कृत कृति है।

पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय जी ने मनुस्मृति का प्रणयम लगभग 80 वर्ष पूर्व किया था। विस्तृत भूमिका से भी यह ग्रन्थ संनिहित हैं जिसमें अनेक शोधपूर्ण तथ्यों का प्रकाशन हुआ है। अनेक दशकों से यह ग्रन्थ अनुपलब्ध था। वैदिक साहित्य के प्रमुख प्रकाशक यशस्वी श्री अजय आर्य जी की दृष्टि इस अभाव की ओर गई और अब यह ग्रन्थ सुलभ हो गया है। इसका मूल्य तीन सौ रूपये मात्र है जो आज महंगाई के युग में ग्रन्थ के महत्व की दृष्टि से अधिक नहीं है। अनेक प्रकाशक इतने बड़े आकार के ग्रन्थ का मूल्य हजार व उससे कहीं अधिक रखते हैं। मैसर्स विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली प्रकाशन द्वारा सभी ग्रन्थों को आधुनिक भव्य साज सज्जा के साथ प्रकाशित किया जाता है और मूल्य यथासम्भव कम रखा जाता है। हमने इस ग्रन्थ की पांच प्रतियों का आदेश करते हुए अग्रिम मूल्य भेज दिया है। हम सभी आर्य विद्वानों व स्वाध्याय में रूचि रखने वाले पाठकें से अपनी ओर अनुरोध करते हैं कि वह इस ग्रन्थ को मंगा कर इसके स्वाध्याय से स्वयं को लाभान्वित करें। प्रकाशक के फोन नं, 011-23977216 और 011-65360255 हैं, इमेल: [ajayarya16@gmail.com](mailto:ajayarya16@gmail.com) तथा वेब साइट [www.vedicbooks.com](http://www.vedicbooks.com) है। इनसे पत्र व्यवहार का पता **‘श्री अजय आर्य, विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, 4408 नई सड़क, दिल्ली-110006’ है।**

हमें जिस मित्र श्री धर्मपाल सिंह ने 46 वर्ष पूर्व सन् 1970 में आर्यसमाज से जोड़ा था, वह ऋषि दयानन्द व वैदिक साहित्य के प्रेमी थे। खूब पुस्तकें खरीदते व पढ़ते थे। बीस वर्ष पूर्व एक दुर्घटना में उनका देहान्त हो गया था। हमने उनसे पुस्तक क्रय करने व पढ़ने का गुण मिला है। इस ग्रन्थ की हमें भी प्रतीक्षा है। आगामी एक सप्ताह में यह हमें प्राप्त हो जायेगा। इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए हम प्रकाशक श्री अजय कुमार आर्य जी को साधुवाद, धन्यवाद, शुभकामनायें एवं बधाई देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**